

औद्योगिकरण और नगरीयकरण की अपार वृद्धि का सामाजिक पर्यावरण पर प्रभाव

डॉ० पुरुषोत्तम प्रसाद

विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान, बालगंगा महाविद्यालय सेन्दुल (केमर), टिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड

शोध सारांश:

यह शोध पत्र आधुनिक विकास प्रक्रियाओं से उत्पन्न जटिल समस्याओं का सम्यक् विश्लेषण प्रस्तुत करता है। शोध में स्पष्ट किया गया है कि तीव्र औद्योगीकरण और नगरों के विस्तार ने जहाँ एक ओर सामाजिक व आर्थिक प्रगति को गति प्रदान की है, वहीं दूसरी ओर प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन तथा प्राकृतिक असंतुलन जैसी गंभीर चुनौतियों को जन्म दिया है। उद्योगों से निकलने वाले विषैले धुएँ, रासायनिक अवशिष्ट और निरंतर बढ़ते शहरी जनसंख्या दबाव ने वायु, जल और भूमि को प्रदूषित कर दिया है, जिसके कारण असमय वर्षा, बाढ़, सूखा, भूकम्प तथा वैश्विक ऊष्मीकरण जैसी समस्याएँ तीव्र रूप से उभर रही हैं। नगरीयकरण के प्रत्यक्ष प्रभाव खाद्य उत्पादन में कमी, भूमि की उर्वरता में गिरावट और महँगाई वृद्धि के रूप में सामने आए हैं। इससे सामाजिक असमानता और आर्थिक असुरक्षा भी बढ़ी है। इस संदर्भ में पर्यावरण शिक्षा को आवश्यक बताया गया है ताकि समाज को पर्यावरणीय संकटों के प्रति जागरूक कर सतत विकास की दिशा में अग्रसर किया जा सके। शोध पत्र में यह भी प्रतिपादित किया गया है कि राजनीतिक इच्छाशक्ति एवं कठोर कानूनों द्वारा ही औद्योगिक और नगरीय विस्तार पर प्रभावी अंकुश लगाया जा सकता है। यदि समय रहते प्रभावी कदम न उठाए गए तो यह स्थिति मानव सभ्यता के अस्तित्व पर गंभीर संकट उत्पन्न कर सकती है। औद्योगीकरण और नगरीयकरण की अनियंत्रित वृद्धि सामाजिक पर्यावरण के लिए अभिशाप सिद्ध हो रही है। अतः मानव और प्रकृति के बीच संतुलन बनाए रखने हेतु सतत विकास ही एकमात्र सार्थक विकल्प है।

मुख्य शब्द: औद्योगीकरण, नगरीयकरण, सामाजिक पर्यावरण, जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, सतत विकास, पर्यावरण शिक्षा, वैश्विक ऊष्मीकरण, जनसंख्या वृद्धि, राजनीतिक उपाय।

मूल आलेख

पर्यावरण वर्तमान समय में एक महत्वपूर्ण विषय बन चुका है। स्थानीय स्वशासन से लेकर विश्व स्तरीय राजनीति तक पर्यावरण संरक्षण की चर्चा प्रचलित है। पर्यावरण प्रकृति की रचना है। यह हमारे चारों ओर फैला हुआ है तथा प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में हमें प्रभावित करता है। पर्यावरणीय राजनीति, राजनीति का महत्वपूर्ण पक्ष है। वर्तमान में पर्यावरण एवं विकास के प्रदूषणकारी तरीकों को परस्पर विरोधी माना जा रहा है। ऐसे विकास मार्ग एवं प्रतिमानों की खोज की जा रही है, जिनसे मानव सुरक्षित रहे तथा औद्योगिक तकनीक और प्रकृति भी संरक्षित रह सके। सतत विकास की अवधारणा इसी चिंतन का परिणाम है।

सभ्यता के विकास के साथ-साथ औद्योगिक शब्द का महत्व बढ़ता गया है। औद्योगीकरण का जीवन के प्रत्येक क्षेत्र पर प्रभाव पड़ा है। इसके कारण जहाँ नगरीय जनसंख्या में वृद्धि हुई, वहीं आवास की समस्या भी उत्पन्न हुई। कृषि का यंत्रीकरण, शासकीय संस्थाओं का विकास, राजनीतिक जागरूकता, व्यवसायिक विविधता, संचार साधनों का विकास, धर्म के प्रभाव में कमी, पड़ोस के महत्व में गिरावट, नैतिक मूल्यों में परिवर्तन आदि भी औद्योगीकरण के प्रतिफल हैं। औद्योगीकरण एवं नगरीकरण से उत्पन्न प्रभाव तुरंत परिलक्षित नहीं होते, लेकिन उनके संचयी प्रभाव इतने विकट और खतरनाक होते हैं कि उनसे प्राकृतिक पर्यावरण का स्वरूप बदल जाता है।

पर्यावरण शिक्षा, पर्यावरण के ही माध्यम से उसके यथोचित संरक्षण हेतु दी जाती है। पर्यावरण जड़ और चेतन दोनों को ही सजग कर सकने में समर्थ है। जो प्राणी एवं जंतु अपने को पर्यावरण के अनुकूल नहीं बना पाए, वे भू-मंडल से लुप्त हो गए। पर्यावरण स्वयं एक शिक्षक के समान है। वह परिणामों के माध्यम से मानव को स्पष्ट रूप से आभास कराता है कि पर्यावरण के संतुलन को नष्ट करने में अंततः मानव को ही क्षति उठानी पड़ती है। मनुष्य और पर्यावरण में अत्यधिक घनिष्ठ संबंध पाया जाता है। यह सर्वाधिक अपने आस-पास के वातावरण से वास्तविक रूप में प्रभावित होता है। आज का मानव पर्यावरण का निर्माता और संशोधक दोनों है। आदिकाल में मनुष्य की संख्या अल्प थी और उसका ज्ञान अत्यंत सीमित। वह प्रकृति द्वारा नियंत्रित होता रहा क्योंकि प्रकृति उसकी प्रत्येक आवश्यकता को पूरा करती रही, परंतु मानव की प्रत्येक लोलुपता को पूरा नहीं कर सकी।

औद्योगिक इकाइयाँ प्रदूषण नियंत्रण के लिए निर्धारित मानदंडों का पालन नहीं करतीं। कारखानों की चिमनियाँ से लगातार निकलता धुआँ, विभिन्न वाहनों से उत्सर्जित गैसों और औद्योगिक अवशिष्ट जैसे कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड एवं सल्फर डाइऑक्साइड वायुमंडल को प्रदूषित करते हैं, जो मानव सहित अन्य प्राणियों के लिए अत्यंत हानिकारक हैं। साथ ही ये पेड़-पौधों, तालाबों, नदियों और समुद्र के जल को भी दूषित कर देते हैं। वातावरण में बढ़ती सल्फर डाइऑक्साइड तथा नाइट्रोजन ऑक्साइड गैसों की सांद्रता से तेजाबी वर्षा का खतरा बढ़ रहा है। ये जहरीली गैसों उद्योगों की चिमनियाँ, मोटर गाड़ियों, तेल से चलने वाली भट्टियों, कोयला खदानों, बिजलीघरों और पेट्रोल शोधन कारखानों से निकलकर वायुमंडल में पहुँच जाती हैं, जहाँ पानी के साथ क्रिया करके सल्फ्यूरिक अम्ल और नाइट्रिक अम्ल बनाती हैं। यही अम्ल जब वर्षा के रूप में धरती पर गिरते हैं तो वे संपूर्ण पृथ्वी पर अनेक प्रकार के हानिकारक दुष्प्रभाव छोड़ते हैं, जिनका असर मानव समाज, प्रकृति और पर्यावरण पर पड़ता है। इस अम्लीय वर्षा का अधिकांश भाग जब पृथ्वी द्वारा अवशोषित होता है तो भूमि की उर्वरता शक्ति घटने लगती है, जिससे फसलों की उत्पादन क्षमता कम हो जाती है। वायु में सल्फर डाइऑक्साइड की अधिकता के कारण कोहरे जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जो मानव के श्वसन तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव डालने के साथ ही आँख, गले और फेफड़ों के रोगों को जन्म देती है।

वाशिंगटन स्थित अर्थ पॉलिसी इंस्टीट्यूट के अध्यक्ष लेस्टर ब्राउन कहते हैं कि हमारी कृषि 11,000 वर्षों में विकसित हुई है और उस समय जलवायु स्थिर थी, लेकिन अब यह अस्थिर हो गई है तथा कृषि को नई परिस्थितियों के अनुरूप ढालना आवश्यक हो गया है। वैज्ञानिकों की गणना के अनुसार, दुनिया में गेहूँ का उत्पादन ग्लोबल वार्मिंग के बिना होने वाले अनुमानित उत्पादन से 33 मीट्रिक टन कम रहा। रिसर्च टीम के अनुसार, उत्पादन में हुई क्षति के कारण कीमतों में 18.6 प्रतिशत की वृद्धि हुई। नगरीयकरण से जलवायु में परिवर्तन आया है, जिसका खाद्य उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। परिणामस्वरूप हाल के दशकों में खाद्य पदार्थों की कीमतों में उल्लेखनीय बढ़ोतरी हुई है। वैज्ञानिकों का मानना है कि ग्लोबल वार्मिंग के कारण यूरोप में 2003 की विनाशकारी गर्मी पुनः झेलनी पड़ सकती है, जिससे बाढ़ की समस्या भी उत्पन्न हो सकती है। एक नए अध्ययन के अनुसार, विश्व स्तर पर फसलों की उत्पादकता में गिरावट वर्षा के पैटर्न में परिवर्तन के कारण नहीं, बल्कि उच्च तापमान के कारण हुई है। अधिक तापमान निर्जलीकरण करता है, परागण को रोकता है और प्रकाश-संश्लेषण की प्रक्रिया को धीमा कर देता है।

औद्योगीकरण एवं नगरीयकरण से जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है, जिसके परिणामस्वरूप समाज में पर्यावरण शिक्षा को अनिवार्य बना दिया गया है। आर. ए. शर्मा के अनुसार, “पर्यावरण शिक्षा में पर्यावरण के भौतिक और सांस्कृतिक पक्षों की जानकारी दी जाती है और जीवन की वास्तविक परिस्थितियों के लिए उसकी सार्थकता का अनुभव कराया जाता है, जिससे पर्यावरण के असंतुलन में सुधार कर अपेक्षित पर्यावरण का विकास किया जा सके।” वास्तव में, पर्यावरण शिक्षा का आशय उस प्रक्रिया से है, जो विश्व समुदाय को पर्यावरण की समस्याओं के प्रति सचेत करती है, उन्हें समझने और उनका समाधान खोजने की प्रेरणा देती है तथा भावी समस्याओं को

रोकने में भी सहायक होती है। अतः कहा जा सकता है कि पर्यावरण शिक्षा वर्तमान समस्याओं से बचाव और भविष्य की सुरक्षा हेतु जागरूकता का प्रशिक्षण प्रदान करती है।

विश्वस्तरीय राजनीतिक गतिविधियाँ भी नगरीय एवं औद्योगिक विकास पर अंकुश लगाकर सामाजिक पर्यावरण सुधारने के लिए कानून बना सकती हैं। राजनीति को राज्य एवं अन्य राजनीतिक संस्थाओं को निर्देशित करने और प्रशासन से जोड़ा जाता है। राजनीति या पॉलिटिक्स शब्द यूनानी भाषा के पोलिस से उत्पन्न हुआ है, जो प्राचीन नगर-राज्यों की सार्वजनिक गतिविधियों को दर्शाता था। वर्तमान समय में राजनीति को एक गतिविधि के रूप में स्वीकार किया जाता है, जो सार्वजनिक विषयों से संबंधित है और सत्ता प्राप्ति से भी जुड़ी होती है। लोकतांत्रिक समाजों में सत्ता का उद्देश्य जनता का प्रतिनिधित्व कर सार्वजनिक कल्याण करना है। सत्ता और जनता के बीच यह कार्य राजनीतिक दलों द्वारा किया जाता है। राजनीतिक दल समान विचारधारा एवं आस्था वाले व्यक्तियों का समूह होते हैं, जो किसी निश्चित राजनीतिक कार्यक्रम को पूरा करना चाहते हैं। इस कार्यक्रम को लागू करने के लिए वे संवैधानिक साधनों का प्रयोग करते हैं। पर्यावरण प्रदूषण, नगरीकरण और औद्योगीकरण जैसी ज्वलंत समस्याओं के समाधान हेतु विश्व राजनीतिक संघों और राष्ट्रों को ठोस कानून लागू करने की आवश्यकता है।

भारत में केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, दिल्ली ने देश के 24 इलाकों को पर्यावरण की दृष्टि से खतरनाक बताते हुए समस्याग्रस्त घोषित किया है। इनमें मद्रावती (कर्नाटक), गोविंदगढ़ (पंजाब), जोधपुर (राजस्थान), कालाम्बर (हिमाचल प्रदेश), कोरबा (मध्य प्रदेश), मनाली (तमिलनाडु), पाली (राजस्थान), परवान (हिमाचल प्रदेश), पाटन चेरी पुलाराम (आंध्र प्रदेश), तारापुर (महाराष्ट्र) और अंकलेश्वर (गुजरात) शामिल हैं। केन्द्रीय नियंत्रण बोर्ड ने संबंधित राज्यों के प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों और केन्द्र शासित प्रदेशों की प्रदूषण नियंत्रण समितियों के साथ मिलकर एक व्यापक सर्वेक्षण किया। निष्कर्ष निकला कि इन क्षेत्रों में जल और वायु प्रदूषण के मुख्य कारण औद्योगिक इकाइयाँ हैं।

जहाँ एक ओर औद्योगीकरण एवं नगरीकरण ने मानव जाति के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है और सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं में अहम भूमिका निभाई है, वहीं आधुनिक काल में इसकी तीव्र गति ने पर्यावरण प्रदूषण को अत्यधिक बढ़ावा दिया है। वर्तमान समय में पर्यावरण प्रदूषण को जलवायु परिवर्तन का सबसे प्रमुख कारण माना जाता है। मैक्सवेल के अनुसार, “हमारे द्वारा वायुमंडल का सर्वाधिक दुरुपयोग स्वास्थ्य के लिए खतरा और जीवन के लिए संकट बन गया है। इसके परिणामस्वरूप पौधों और अन्य जीवों को विषैली हवा, धूप, धूल एवं धुएँ से प्रदूषित क्षेत्रों में नुकसान उठाना पड़ रहा है।”

निष्कर्ष

औद्योगीकरण और नगरीकरण की तीव्र गति ने सामाजिक पर्यावरण को गहराई से प्रभावित किया है। यह प्रक्रिया जहाँ विकास और प्रगति का प्रतीक मानी जाती है, वहीं दूसरी ओर जलवायु परिवर्तन का प्रमुख कारण बनकर मानव सभ्यता के अस्तित्व के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न कर रही है। प्रदूषण, प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन, बढ़ती जनसंख्या तथा मानवीय अपशिष्टों ने पर्यावरण संतुलन को अस्थिर बना दिया है। औद्योगिक इकाइयाँ अपने लाभ की दौड़ में प्रदूषण नियंत्रण के मानकों की अनदेखी कर रही हैं, जिसके कारण वायु, जल और भूमि लगातार विषाक्त होती जा रही है। मानव गतिविधियों के कारण उत्पन्न यह असंतुलन असमय वर्षा, बाढ़, सूखा और वैश्विक ऊष्मीकरण जैसी आपदाओं को जन्म दे रहा है। यदि इसे रोकने के लिए ठोस और सामूहिक प्रयास नहीं किए गए तो आर्थिक विकास भी समाज के लिए अभिशाप साबित होगा। वर्तमान परिदृश्य यह स्पष्ट करता है कि कोई भी औद्योगिक संस्थान पर्यावरण को क्षति पहुँचाने में पीछे नहीं है और निरंतर बढ़ता शहरीकरण इस समस्या को और गंभीर बना रहा है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि पर्यावरण संतुलन सम्पूर्ण विश्व का आधार है। यदि जलवायु परिवर्तन के कारकों पर नियंत्रण नहीं किया गया तो मानव जाति को भयानक संकटों का सामना करना पड़ेगा। इसलिए कम विकसित, विकसित और विकासशील सभी देशों को मिलकर कारगर उपाय अपनाने होंगे, तभी मानव सभ्यता का अस्तित्व सुरक्षित रह सकेगा।

सन्दर्भ सूची:

1. सरयू प्रसाद चैवे, सोशियोलॉजिकल फाउंडेशन्स ऑफ एजुकेशन, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, सप्तम संस्करण, 2003, पृ. 307।
2. इन्दिरा सिंह, पर्यावरण भूगोल, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2009, पृ. 52।
3. मुकुल व्यास, कृषि पर ग्लोबल वार्मिंग का असर, अमर उजाला दैनिक, 31 मई 2011, पृ. 12।
4. आर. ए. शर्मा, इन्वायरमेंटल एजुकेशन, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, 2011, पृ. 21।
5. सुभाष कश्यप, राजनीति कोष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली, 2011, पृ. 374।
6. ए. डी. आशीर्वादम, राजनीति विज्ञान, एस. चन्द कम्पनी लिमिटेड, नई दिल्ली, 2012, पृ. 31।
7. सी. वी. गेना, तुलनात्मक राजनीति एवं तुलनात्मक संस्थाएं, विकास पब्लिशिंग हाउस, पृ. 822।
8. संजय वर्मा, पर्यावरण : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ. 220।
9. जगजीत सिंह, पर्यावरण : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2006, पृ. 273।